www.thearyasamaj.org

...6281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल. 0011/2012-14

ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

साप्ताहिक
आर्य मर्यादा
आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख साप्ताहिक पत्र

मूल्य : 2 रु.
वर्ष: 70 अंक: 29
सृष्टि संवत् 1960853114
20 अक्तूबर 2013
दयानन्दाब्द 189
वार्षिक : 100 रु.
आजीवन : 1000 रु.
दूरभाष : 2292926, 5062726
जालन्धर

वर्ष–70, अंक : 29, 17/20 अक्तूबर 2013 तदनुसार 28 आश्विन सम्वत् 2070 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

आओ! वेदोद्यान चलें

-ले० श्री भद्रसेन 182-शालीमार नगर होशियारपुर

(गतांक से आगे)

दार्शनिक विचारों की दृष्टि से नासदीय, ज्ञान, वाक् और पुरुष सूक्त विशेष रूप में दर्शनीय हैं। काव्य-कला की दृष्टि से उषा, अक्ष, सूर्या विवाह, मण्डूक, अरण्यानि और दानस्तुति विषयक सूक्त साहित्य-शास्त्र का अच्छा परिचय देते हैं। ऋग्वेद के कुछ सूक्तों में संवाद के ढंग के किए गए वर्णन भी प्राप्त होते हैं। इन संवाद सूक्तों में उर्वशी-पुरुरवा, यम-यमी, सरमा-पणी सूक्त अपना विशेष स्थान रखते हैं। उर्वशी-पुरुरवा सूक्त ने तो कवियों को काव्यकला दिखाने का भी अवसर दिया है। कुछ मन्त्रों में प्रश्न-उत्तर के ढंग से भी चर्चा मिलती है और कुछ मन्त्र तो पहेलियों के रूप में वर्णन करते हैं।

4. ऋग्वेद का वर्ण्य विषय

ऋग्वेद के मन्त्रों में अग्नि और इन्द्र का सबसे अधिक वर्णन है। ये अग्नि आदि शब्द सब स्थानों पर एक रूप में दिखाई नहीं देते हैं। कहीं ये परमतत्त्व के वाचक हैं तो कहीं प्राकृतिक तत्त्व, भाव, राजा, नेता की ओर संकेत करते हैं। जैसे कि वरुण का कुछ सूक्तों, मन्त्रों में ऋत नियम के नियमक, नियन्त्रक, व्यवस्थापक, न्यायाधीश के रूप में वर्णन है, तो कहीं जल के अधिष्ठाता के रूप में भी मिलता है। नैतिक दृष्टि से वरुण सूक्त का वर्णन विशेष दर्शनीय है। क्योंकि वरुण ऋत-नियम के साथ सम्बन्ध रखता है।

कुछ विद्वान् भाषा, छन्द, विशेष शब्द प्रयोग और देवताओं के वर्णन की भिन्नता के कारण दो से सात तक के मण्डलों के मन्त्रों को औरों की अपेक्षा अधिक प्राचीन मानते हैं। क्योंकि इन मण्डलों का एक-एक ही ऋषि है, परन्तु प्रथम, नवम और दशम के अनेक ऋषि हैं तथा अष्टम के कण्व तथा अंगिरस ऋषि हैं। जहां इन मण्डलों के ऋषियों में परस्पर साहित्य के अन्दर पितामह, पिता, पुत्र, पौत्र सम्बन्ध मिलता है, वहां वर्णन कला में भी स्पष्ट रूप से समानता मिलती है, पुनः इनमें प्राचीन-अर्वाचीन का भेद कैसे किया जा सकता है ? प्रायः सर्वत्र वर्ण्य विषय के भेद से तथा वैसे भी काव्य-कला और भाषा में अन्तर आ ही जाता है। यह कोई अनोखी बात नहीं है।

ऋग्वेद के इन दस हजार पांच सौ से भी अधिक मन्त्रों में विविध छन्दों और अलंकारों से युक्त भाषा का प्रयोग हुआ है। कुछ स्थलों को छोड़कर भाषा अधिक कठिन नहीं है। जहां वृत्र सम्बन्धी सूक्तों में युद्ध जैसा वर्णन है, वहां अध्यात्म वर्णन में शान्त रस का भी अच्छा परिपाक मिलता है। ऋग्वेद में अधिकतर ज्ञानकाण्ड अर्थात् अग्नि, इन्द्र आदि देवतावाचक शब्दों में वस्तु वर्णन है।

ऋग्वेद के भावों को स्पष्ट करने के लिए अनेक विद्वानों ने प्रशंसनीय प्रयास किया है। जिनमें ऐतरेय ब्राह्मण के बाद भाष्यात्मक पद्धति की दृष्टि से निरुक्तकार यास्क का प्रथम स्थान है, क्योंकि उन्होंने प्रसंगवश ऋग्वेद के अनेक मन्त्रों और मन्त्रांशों का विवेचन किया है। इसी प्रसंग में निरुक्त के संस्कृत और हिन्दी आदि भाषाओं में किए गए भाष्य भी स्मरणीय हैं। क्रमबद्ध भाष्यकारों में श्री स्कन्द, उद्गीथ, वेंकट, माधव, सायण, मुद्गल आदि मध्यकालीन हैं, तो आधुनिक काल में महर्षि दयानन्द, जयदेव, सातवलेकर, रामगोविन्द, श्री राम शर्मा, पं. शिव शंकर, हरिशरण सिद्धान्तालंकार, आचार्य वैद्यनाथ आदि भाष्यकार अनेक भाषाओं के हुए हैं। जन जन तक वेद के भाव को पहुंचाने के लिए इन सब का प्रयास सर्वथा स्तवनीय है। कुछ विद्वानों ने ऋग्वेद के कुछ सूक्तों और मन्त्रों के अर्थ पृथक् ग्रन्थ रूप में प्रकाशित किए हैं। ऋग्वेद के सम्बन्ध में कुछ स्वतन्त्र पुस्तकें भी कई मान्य विद्वानों की प्रकाश में आ चुकी हैं।

स्थाली पुलाक न्याय से ऋग्वेद के कुछ मन्त्रों का आस्वादन कीजिए-

पारस्परिक व्यवहार का पहला साधन वाणी है। भाषा के बिना पारस्परिक व्यवहार सिद्धि की कल्पना भी दुष्कर है, वह तो गूंगों की दुनिया होगी, जहां कष्ट, दुख, अभाव और तड़पन के सिवाय और कुछ भी न होगा, पारस्परिक व्यवहार की सिद्धि में वाणी के महत्त्व को देखते हुए यह सरलता से कहा जा सकता है कि जब हम वाणी का उचित प्रयोग करते हैं, तभी हमारा व्यवहार ठीक प्रकार से सम्पन्न होता है। पर बिना विचारे या जानबूझ कर वाणी के अनुचित प्रयोग से अनर्थ के सिवाय और कुछ भी परिणाम नहीं होता। इसके उदाहरण इतिहास के पन्नों में भरे पड़े हैं।

तभी तो वेद ने कहा है-

सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत।
अत्रा सखायः सख्यानि जानते भद्रैषां लक्ष्मी र्निहिताधिवाचि।

ऋ० 10,71,2

जैसे छाननी से छानकर सक्तु का सेवन सुखदायक होता है वैसे ही जो विवेकी जन मन से विचार कर हितकर, मधु सदृश वाणी बोलते हैं। उनका मित्रवर्ग चिरस्थायी तथा सदा बढ़ता रहता है और उनकी वाणी में कल्याणकारी लक्ष्मी का वास होता है।

सांसारिक स्थिति का एकमात्र आधार पारस्परिक व्यवहार ही है। यदि हमारा एक दूसरे के साथ व्यवहार न हो, तो मनुष्यों का जीवन दूभर हो जाता। तभी तो कहते हैं कि मनुष्य एक परस्परापेक्षी सामाजिक प्राणी है।

(क्रमशः)

www.thearyasamaj.org

'सर्वज्ञ, सर्वव्यापक व निराकार ईश्वर की कृति है यह साकार जगत्'

-ले० मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

मनुष्य इस संसार को देखकर अनुमान करता है कि इसे बनाने वाली सत्ता कौन है, कैसी है व कहां है ? वैज्ञानिकों ने भी इस प्रश्न पर अपने तौर-तरीकों से विचार किया। उनके तौर तरीके भौतिक पदार्थों के अध्ययन से जुड़े तौर-तरीकों से सम्बन्धित रहे हैं। ईश्वर के अभौतिक होने से वह इन वैज्ञानिकों की पकड़ में न आ सका। ईश्वर की तरह हमारी आत्मा भी अभौतिक है। यदि वह आत्मा से ईश्वर के स्वरूप की तुलना करते, विचार व चिन्तन करते तो सम्भवत: वह ईश्वर के कुछ समीप पहुंच सकते थे। आध्यात्मिक व योगीजन अपनी आत्मा, मन व बुद्धि को ईश्वर में लगाते हैं तो उन्हें ईश्वर के अस्तित्व की अनुभूति हो जाती है। ध्यान-चिन्तन की साधना में तत्पर रहकर न केवल वह ईश्वर को ही जान लेते हैं अपितु उसका साक्षात्कार अर्थात् उसका निभ्रान्त ज्ञान भी प्राप्त करने में सफल होते हैं। यदि एप्रोच या मार्ग सही न हो तो सफलता नहीं मिलती है। ऐसा ही हम वैज्ञानिकों के मामले में भी पाते हैं। उनकी एप्रोच-मार्ग ठीक नहीं है, उन्हें ईश्वर प्राप्ति का अपना मार्ग, एप्रोच व तरीका बदलना होगा जिससे वह यथार्थ ज्ञान प्राप्त कर सकें। यह बात हम किसी अहंकारवश नहीं कह रहे हैं अपितु सबके प्रति पूरे सन्मान, सहृदयता व सार्वत्रिक हित की दृष्टि से कह रहे हैं।

वैज्ञानिक अपने तरीके से काम करते हैं, ईश्वर को भी उसी प्रकार सिद्ध करना चाहते थे, वह हो न सका, तो उन्होंने ईश्वर के अस्तित्व को अस्वीकार कर दिया और कहा कि यह सारा जगत स्वयमेव या स्वत: निर्मित है। वैज्ञानिक ईश्वर को इसलिए नहीं मानते कि वह दृष्टिगोचर नहीं होता और न उसकी अनुभूति सामान्यत: सभी लोगों को होती है। वेदों व उपनिषद में ईश्वर के जिस स्वरूप का वर्णन है उसे वैज्ञानिक जानते ही नहीं और जानने का प्रयत्न भी नहीं करते। हमें लगता है कि यदि शीर्ष वैज्ञानिक वेद व उपनिषद में चर्चित ईश्वर के स्वरूप को पहले जान लें फिर विवेचना कर ईश्वर के अस्तित्व से इन्कार करें तो यह कुछ सीमा तक उचित हो सकता है। हमें वैज्ञानिकों के ईश्वर की सत्ता या अस्तित्व की अनुपस्थिति अथवा अभाव से सम्बन्धित तर्क व कारण ज्ञात नहीं हैं अन्यथा हम उनके उत्तर ढूंढते। दुनिया का यह सबसे बड़ा आश्चर्य है कि आज के वैज्ञानिक जो सत्य की बड़ी-बड़ी खोजों को करते हैं, वह ईश्वर को बिना पढ़े, समझे व तर्क-वितर्क किए अस्वीकार कर देते हैं। हम विनम्रता पूर्वक यह कहना चाहते हैं कि क्या आज तक किसी वैज्ञानिक ने वेद व उपनिषद वर्णित ईश्वर के स्वरूप की समीक्षा कर पश्चात् ईश्वर की सत्ता के असिद्ध होने पर उससे इन्कार किया ? हमारे सीमित ज्ञान में इस शंका का उत्तर 'न' में मिलता है। इसका अर्थ तो यही हुआ कि हमारे वैज्ञानिक बन्धु किन्ही कारणों से ईश्वर के अस्तित्व में दोहरे मापदण्ड या पक्षपातपूर्ण रवैया अपनाते हैं। बुद्धिजीवी होने के कारण हम उनसे ऐसी अपेक्षा नहीं रखते।

आईये देखते हैं कि योगदर्शनकार महर्षि पतंजलि जिन्होंने ईश्वर के साक्षात्कार कराने की विद्या का ग्रन्थ लिखा है, क्या वे ज्ञानी, विद्वान या वैज्ञानिक नहीं थे, क्या उनके ग्रन्थ को पढ़कर व उसके अनुरूप विधि-विधान का पालन और साधना करके ईश्वर को जाना व प्राप्त नहीं किया जा सकता और क्या ईश्वर का साक्षात्कार असम्भव है ? इसका अर्थ तो यह होगा कि आज तक देश-विदेश में कहीं भी किसी को ईश्वर का साक्षात्कार हुआ ही नहीं। यदि ऐसा है तो एक प्रश्न यह भी विचारणीय बनता है कि ईश्वर के होने का विचार सारे विश्व में कैसे फैला ? यह तो सबसे बड़ा आश्चर्य होगा कि एक अस्तित्वहीन सत्ता को संसार का अधिकतर या अधिकतम भाग मानता है। यह जरूर है कि जब कोई विद्या पूरी तरह सुरक्षित न रहे तो उसको समझने में भ्रान्तियां होती है। इन भ्रान्तियों से सारे विश्व में ईश्वर के बारे में नाना प्रकार की कल्पित व असत्य मान्यतायें उत्पन्न हुई हैं। कालान्तर में इससे देशों व लोगों के राजनीतिक, आर्थिक स्वार्थ व लोकैषणा आदि मुद्दे भी जुड़ गये और उन्होंने यह मान लिया कि कुछ भी हो, ईश्वर व धर्म विषयक उनके अपने विचारों व विचारधारा से इतर सत्य, तर्क संगत व सृष्टि क्रम के अनुकूल विचारों को मानना ही नहीं है। कुछ कमियां सत्य के प्रचारकों में भी रहीं हैं। आज वेद की सत्य विचारधारा का प्रचार-प्रसार प्राय: नगण्य है। आर्य समाजों में जहां ईश्वर के सत्य स्वरूप का सबको ज्ञान है, वहां पदों के लिए मारामारी मची हुई है। स्थानीय न्यायालयों व उच्च न्यायालयों तक में वर्षों से मामले अनिर्णीत हैं। बहुत से आर्य नेताओं का ध्यान वेद प्रचार पर न होकर अपने पद को स्थिर रखने में लग रहा है जिसके कारण वैदिक विचारधारा के प्रचार प्रसार में सफलता नहीं मिल रही है।

हमारा ज्ञान व अनुभव है कि ईश्वर को जाना जा सकता है, उसका अनुभव किया जा सकता है और साक्षात्कार भी किया जा सकता है। यह विचार करने व ध्यान देने योग्य बात है कि संसार में 2 चेतन तत्व हैं, एक ईश्वर व दूसरा जीवात्मा। दोनों ही आंखों से दिखाई नहीं देते। जीवात्मा मनुष्य, पशु, पक्षी, जलचर, नभचर व थलचर में विद्यमान होता है जिसे इन प्राणियों के शरीर को देख कर, विचार व विवेक से उन्हें जानते हैं कि इस प्राणी के जड़ शरीर के भीतर एक चेतन तत्व जीवात्मा अवश्य है। क्या कोई व्यक्ति ऐसा भी है जो कहे कि वह जीवात्मा का अस्तित्व नहीं मानता। यदि कोई जीवात्मा के स्वतन्त्र अस्तित्व को नहीं मानता तो उसे सिद्ध करना या प्रमाण देना है ? अचानक हृदयाघात से मृत्यु क्यों हो जाती है। शरीर का कोई तत्व तो कम नहीं हुआ। हां श्वसन क्रिया अवरूद्ध हुई है। जब सब रोगों के उपचार का प्रयास किया जाता है और रोगी स्वस्थ भी होते हैं, तो फिर इस श्वसन प्रणाली का उपचार भी खोजा जाना चाहिये। 2 अरब लगभग वर्षों से यह संसार चल रहा है। आज तक किसी ने भी इसके उपचार के बारे में सोचा नहीं। इसका सीधा अर्थ है कि सभी चिकित्सक व वैज्ञानिक मानते हैं कि मृत्यु का कारण केवल श्वसन प्रणाली का बन्द होना ही नहीं है अपितु शरीर में विद्यमान चेतन तत्व का शरीर से पृथक होना है जिसे वापिस शरीर में लौटाया नहीं जा सकता।

जिस चेतन जीवात्मा की उपस्थिति में शरीर अपनी समस्त क्रियायें करता है तो उसकी अनुपस्थिति में वह निष्क्रिय हो जाता है, क्यों ? यदि प्राणियों के शरीरों में कोई चेतन तत्व नहीं है तब मृत्यु के समय शरीर एकाएक निर्जीव व अचेतन, निष्क्रिय, ज्ञानशून्य या कर्महीन क्यों हो जाता है ? हृदय की धड़कन जो वर्षों से चल रही थी, प्राण चल रहे थे वह एक ही क्षण में बन्द, रूक व निष्क्रिय क्यों हो गये। मृत्यु होने के बाद उसमें विकार होना आरम्भ क्यों हो जाता है, क्यों उसमें दुर्गन्ध का आना आरम्भ हो जाता है ? जीवनकाल में तो ऐसा नहीं था। यदि आत्मा को मान लें तो फिर सारे प्रश्नों के उत्तर मिल जाते हैं जिससे यह सिद्ध होता है कि प्रत्येक जीवित प्राणी के शरीर में एक चेतन तत्व जीवात्मा के रूप में विद्यमान रहता है। छोटे बच्चे को बिना सिखाये माता का दुग्ध पान करना, सोते हुए हंसना, रोना, आयु बढ़ने के साथ उनकी आकृति-प्रकृति का भिन्न-भिन्न होना, कोई शारीरिक शक्ति में अधिक, कोई ज्ञान ग्राहकता में अधिक, कोई शारीरिक बनावट में सुन्दर, कोई कुरूप आदि, यह शरीर में विद्यमान एक अविनाशी व जन्म-मरण धर्मा जीवात्मा के पुनर्जन्म व उसके अस्तित्व के प्रमाण हैं।

इन उदाहरणों से हम यह कहना चाहते हैं कि ईश्वर व जीवात्मा का स्वतन्त्र अस्तित्व है जो अपने स्वभाविक रूप में चेतन तत्व हैं। यह सृष्टि जड़ है एवं इन चेतन सत्ताओं से सर्वथा पृथक है।

(शेष पृष्ठ 5 पर)

सम्पादकीय.....

सत्य ही धर्म का आधार है

मानव जीवन कोटि जन्मों के संचित सौभाग्य का प्रतिफल है। इस दुर्लभ तन को प्राप्त करके इसकी अनन्त सार्थकता संयोजित कर लेना ही अधिक उपयुक्त है। हमारे यहां सत्यशील साधकों और ऋषि मुनियों तथा आर्य ग्रन्थों की व्यापक परम्परा रही है। सत्य इन्हीं सूत्रों में एक अनमोल विभूति है। मानव ने सभ्यता और संस्कृति के इतिहास में न जाने कितने नियम बनाए और बिगाड़े पर सृष्टि के आदि में सत्य की जो श्रेष्ठता और महत्वता थी वह आज भी उसी रूप में विद्यमान है। क्योंकि सत्य सृष्टि का मूल है और जीवन का आधार है। सत्य सबसे बड़ा तप, सबसे बड़ा कर्म और सबसे बड़ी सिद्धि है। सत्य मानव जीवन को श्रेष्ठता और सार्थकता के शिखर पर ले जाने वाला सर्वाधिक निरापद और प्रशस्त राजमार्ग है। सर्व तत्त्वों ने सम्पूर्ण सत्य को ही स्वीकार किया है। मनुष्य सत्याचरण द्वारा ही संसार में जगत पिता, सत्य के स्वरूप परमात्मा का साक्षात्कार कर सकता है।

सत्य निष्ठा पाप कर्मों से विरक्त रखती है। सत्यशोधक तो शांति निर्भयता और आनन्द के संगम में रमण करता रहता है। सम्मान, कीर्ति, गौरव और आत्मरक्षा के लिए सत्य ही सबसे बड़ा सूत्र है। मौत के बाद भी सत्यवादी अपने यशरूपी शरीर के साथ सदा जीवित रहता है। उसके सद्व्यवहार, परोपकारी कृति समाज में उसे अजातशत्रु बना देती है। संसार में उन्नति, उत्कर्ष और उत्थान की प्राप्ति के लिए सत्य ही सबसे उत्तम रास्ता है। निर्विकार, निर्लेप और निश्चिन्त जीवन जीने के लिए सत्य से बढकर कोई उपाय नहीं। संसार में जितने धर्मग्रन्थ, आप्त वचन विद्यमान हैं उनमें जिन-जिन नियमों, गुणों और आचारों की प्रधानता है उनमें सत्य सर्वाधिक प्रमुख है। सारे रास्ते इस सत्य के परमधाम तक ले जाने के लिए हैं। मुण्डकोपनिषद में ऋषि का कथन है-

सत्यमेव जयते नानृतं, सत्येन पन्था विततो देवयान्।

अर्थात् जय सत्य की ही होती है असत्य की नहीं। प्रभु तक ले जाने वाला रास्ता सत्य से निर्मित हुआ है। वह पन्थ देवयान है। सत्य की महिमा विराट है, उसका विश्लेषण सम्भव नहीं है फिर भी शास्त्रकारों ने अपने विचार प्रकट कर सत्य की महिमा का गान किया है। सत्यवादी हरिशचन्द्र का उदाहरण आज भी हमारे सामने है। उनके सत्य की मिसाल आज भी दी जाती है। मर्यादा पुरूषोत्तम राम का जीवन सत्य के उदाहरणों से भरा पडा है। महर्षि दयानन्द ने सत्य की महिमा के बारे में कहा था कि-

लोग कहते हैं कि सत्य को प्रकट न करो, कलेक्टर क्रोधित होगा। कमिश्नर अप्रसन्न होगा, गवर्नर पीड़ा देगा, अरे चक्रवर्ती राजा क्यों न अप्रसन्न हो हम तो सत्य ही कहेंगे। फिर चारों तरफ अपनी तीक्ष्ण नेत्र ज्योति ड़ालकर गर्जती हुई वाणी से कहा परन्तु वह शूरवीर मुझे दिखाओ जो मेरी आत्मा को नाश करने का दावा करता है। जब तक ऐसा वीर संसार में दिखाई नहीं देता तब तक मैं सत्य ही बोलूंगा। यह है सत्यवादी दयानन्द का सत्यस्वरूप। महर्षि ने आचरण की परिभाषा करते हुए सत्यार्थ प्रकाश दशम समुल्लास में लिखा है जो सत्य भाषण आदि कर्मों का आचरण करना है वही वेद और समृति में कहा आचार है।

जिस रूप में जो पदार्थ निश्चित होता है यदि वह रूप सम्यक स्वभाव से विद्यमान रहे तो उसे सच कहते हैं। सबसे बडी साधना, सबसे बडी तपस्या सत्य ही है। सत्य से बढकर कोई धर्म नहीं। असत्य से बढकर कोई पाप नहीं। अत: सत्य ही धर्म का आधार है। अतएव सत्य का कभी परित्याग नहीं करना चाहिए। निश्चय ही सत्य समग्र साधनों की आधारशिला है। सत्य महत्ता को स्पष्ट करते हुए महात्मा एमर्सन ने कहा है कि- जिस सुन्दरतम और श्रेष्ठतम आधार पर मनुष्य को अपना जीवनव अवस्थित करना चाहिए, वह सत्य है।

सत्य एक समग्र भाव है, सम्पूर्ण तत्त्व है। विचार-आचार-वाणी में जो सत्य है, वही सत्य है। मन, वचन और कर्म के एक हो जाने पर ही सिद्धि की कामना की जा सकती है। सत्य वही है जिसमें किसी प्रकार का कोई कष्ट न हो, किसी का अहित न हो। कवि ने कितना सुन्दर कहा है-

सांच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।
जाके हृदय सांच है ताके हृदय आप।।

मनुष्य मात्र का पुनीत कर्त्तव्य है कि वह अपने जीवन में सत्य को धारण करें। सत्य भाषण और सत्य पथ का अनुसरण ही सन्मार्ग है। जो सत्य को अपने जीवन में अपना लेता है वह अपने चरित्र को उज्जवल बना लेता है। सत्य के बराबर कोई दूसरा धर्म नहीं है। अत: जो व्यक्ति अपना कल्याण चाहते हैं वे सदैव सत्य का ही अनुसरण करें।

-प्रेम भारद्वाज संपादक एवं सभा महामंत्री

प्रभो! सुखों की वर्षा करो

-ले० वेद प्रकाश शास्त्री, 4E, कैलाश नगर, फाजिल्का, पंजाब

ओ३म् शन्नो देवी रभिष्टये आपो भवन्तु पीतये॥
शंयोरभि स्त्रवन्तु न: ॥

दिव्यगुणों और शक्तियों से युक्त, सबको आनन्द प्रदान करने वाला, सब कामनाओं को पूर्ण करने वाला सर्वव्यापक परमेश्वर इच्छित पूर्ण आनन्द के लिए हमें शान्ति देने वाला हो। वह परमेश्वर हम पर सुख शान्ति की चारों ओर से वर्षा करे।

हे सर्वव्यापक! हे दिव्यगुण सम्पन्न परमात्मन्! आप अनन्त काल से अपने उपकारों की वर्षा किए जाते हो। आपके उपकारों की वर्षा से प्राणिमात्र की कामनाएं पूर्ण हो रही हैं।

हे ज्ञान स्वरूप भगवन्! आप हमारे हृदय की सभी बुराईयों को जानते हैं। हम आपके नियमों को अनेक बार भंग करते हैं। यह सब देखते हुए भी हमें अबोध बच्चे जानकर आप शान्त बने रहते हैं। आपका हृदय स्नेह और वात्सल्य से परिपूर्ण है। आपकी क्षमा असीम है।

हे जगदीश्वर! आपके दर्शन और मिलन में जो आनन्द है, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। इसलिए हम आपकी शरण में आते हैं। आप अपनी दिव्य ज्योति का साक्षात्कार होने दें। आत्मा को आनन्द विभोर होने दें। शान्ति की कामना करते हुए हम सब आपकी ओर ताक रहे हैं। कृपा करके आप कल्याण एवं शान्ति की वर्षा करें।

हे शान्ति के भण्डार परमेश्वर! हमारे अन्दर चारों ओर से शान्ति की धारा बहने दें। सब के साथ मित्रता, दीन-दुखियों के प्रति करुणा की भावना विकसित होने दें। हे कामनाओं को पूर्ण करने वाले परमात्मन्! हमारे अन्दर और बाहर चारों और शान्ति की धाराएं बहने दें। हमारे रोम-रोम में शान्ति समा जाए।

हे प्रभो! हम सब यही प्रार्थना करते हैं, यही याचना करते हैं, यही कामना करते हैं। स्वीकार करो, स्वीकार करो, स्वीकार करो।

ओ३म् शान्ति: शान्ति: शान्ति: ॥

www.thearyasamaj.org

यज्ञ की अनन्तता

-ले० श्री सुरेश शास्त्री सभा कार्यालय जालन्धर

यज्ञ शब्द अनन्तता का सूचक है। स्वयं जीवन भी एक यज्ञ है, इस जीवन यज्ञ को सुनियमित बनाने के लिए ब्रह्मयज्ञ एवं देवयज्ञ दोनों ही अपेक्षित हैं। ब्रह्मयज्ञ चिन्तन में सम्बद्ध हैं। आत्मा को बलवान बनाने के लिए, इन्द्रियों को संयमित एवं सशक्त करना उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि सारथि के साथ रथ को सुचारू रूपेण चलाने योग्य। इन्द्रियों को बलवान, यशस्वी एवं पवित्र बनाने के लिए ब्रह्म यज्ञ किया जाता है। मुण्डकोपनिषद में कहा गया है कि- नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः अर्थात् निर्बलेन्द्रिय ईश्वर को प्राप्त नहीं कर सकते। ईश्वर के गुण स्वभाव को अपने अन्दर लाने एवं उन गुणों के अर्थ की भावना मन में धारण करने से मनुष्य के अन्तःकरण में उन गुणों का प्रभाव पड़ता है और क्रमशः वे मानव जीवन से अभिन्न हो जाते हैं। गुणों के समावेश से ईश्वर का सामीप्य ही ब्रह्म यज्ञ का लक्ष्य है। सन्ध्या, स्वाध्याय के अनन्तर देवयज्ञ का विधान है जो सैद्धान्तिक एवं धार्मिक होने के साथ-साथ सामाजिक, सुखशान्ति एवं नियमन का भी प्रेरक है। आध्यात्मिकता के साथ-साथ वैज्ञानिकता से परिपूर्ण इस यज्ञ के विषय में आर्ष ग्रन्थों में कहा गया है कि- अग्निहोत्रं जुहुयात् स्वर्गकामः अर्थात् स्वर्ग की इच्छा रखने वाला पुरूष अग्निहोत्र करे। इस भौतिक यज्ञ से जलवायु शुद्ध होती है एवं रोगकारक कीटाणुओं का नाश होता है। प्राणशक्ति के संवर्धन के साथ परिमित वृष्टि करने में भी भौतिक यज्ञ अत्यन्त सहायक है।

यज्ञ क्या है? इसका स्वरूप, उपयोगिता तथा सीमा क्या है? क्या यज्ञ पात्र, यज्ञशाला, हवन सामग्री ही इसके साधन हैं? वस्तुतः तो प्रत्येक श्रेष्ठतम कल्याण कार्य यज्ञ है। यज्ञ शब्द का मौलिक अर्थ यजधातु में है। यज-देवपूजा संगतिकरणार्थ दानेषु अर्थात् जिसमें प्राणीहित, लोकहित एवं सबके प्रति सद्भावना तथा सहृदयता के कार्य सम्पन्न होते हैं वह कर्म श्रेष्ठतम कर्म है, यज्ञ का यही स्वरूप है। यज्ञ का ही स्वरूप यह संसार है। सृष्टि यज्ञ प्राकृतिक देव शक्तियां करती हैं। उसी का अनुसरण मानव करते हैं-

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः तानिधर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते हि नाकं महिमानः सचन्तः यत्रपूर्वे साध्या सन्ति देवाः।।

जिस दिन परमाणुओं से अणु, अणुओं से द्वयणुक, द्वयणुकों से त्रसरेणु तथा त्रसरणुओं से स्थूलभूत पृथिवी, जल, तेज, वायु आदि के रूप में बनने प्रारम्भ हुए उसी दिन से सृष्टि यज्ञ आरम्भ होकर निरन्तर चल रहा है। सृष्टि के इस महान यज्ञ में हम सब अपने लघु यज्ञों से इसे संवर्धित करें, यही वेदों में उपदेश है।

यज्ञ का क्षेत्र शरीर, गृह, समाज, विश्व व ब्रह्माण्ड तक है- वितता ब्रह्मणो मुखे जय यज्ञ, ज्ञान यज्ञ, वाक् यज्ञ, दान यज्ञ, स्वाध्याय यज्ञ, तपो यज्ञ, स्वास्थ्य यज्ञ, कला प्रदर्शन, आविष्कार, सद्विचार चर्चा यह सब समाज कल्याण के साधन होने से यज्ञ हैं। व्यक्तिगत यज्ञ तथा सामाजिक कृत्य जिनमें शुभ, मंगल एवं कल्याण छिपे हुए हैं, सब यज्ञ हैं। यज्ञो वै विष्णुः अर्थात् यज्ञपथ शत-शत प्रयोजनों की ओर ले जाने वाला मार्ग है-

शतशः शोभनोमार्गः शतधा प्रतिपाद्यते।
अयं शतपथो यज्ञो यज्ञात्मेत्यव धार्यताम्।।

शतपथ यजुर्वेदीय ब्राह्मण ग्रन्थ में सामाजिक यज्ञों में उपदा वै यज्ञ, मासो वै उपदा, असो वा उपदा आदि के नाम से एक उपदा यज्ञ भी है। यह उपदा यज्ञ विवशताओं से असन्तुष्ट व्यक्ति करते हैं। वर्त्तमान सत्याग्रह या घेराव उपदा यज्ञ ही है। देवों तथा असुरों के युद्ध में देवों ने असुरों की उपदा कर दी थी। असुरों को अन्न जल वस्त्र सब का अवरोध करके पराजित कर दिया था। शतपथ में इस कथा द्वारा यज्ञ का महत्व व प्रभाव दिखाया गया है।

कविगण काव्य द्वारा साहित्य सृजन करते हैं। चतुर्वर्ग प्राप्ति काव्य का लक्ष्य है। यज्ञ भी चतुर्मुख या चतुश्रृंग होता है। इसका वर्णन निम्न वेद मन्त्र में है। मन्त्र में वृषभ के प्रतीक से यज्ञ का वर्णन पाया जाता है-

चत्वारिश्रृंगाः त्रयोऽस्य पादा, द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महादेवो मर्त्यां आविवेश।।

इस (यज्ञ) वृषभ के चार सींग(चार उद्देश्य धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष)या चार साधन हैं ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद, तीन पैर प्रातः सवन, माध्यन्दिन सवन, एवं सायन्तन सवन या मन, वचन, कर्म इन तीन से परिचालित होता है। दो सिर हैं- हु दाना दानयोः- दान तथा अदान, तप और दीक्षा, ये यज्ञ के मुख्याधार हैं। सात हाथ सात कार्यकर्त्ता- ब्रह्मा, होता, उद्गाता, अध्वर्यु, यजमान, पत्नी तथा प्रस्तोता हैं। इस प्रकार का यह यज्ञ महान् सामर्थ्यवान् समस्त संसार में व्याप्त हो रहा है। ऋतु यज्ञ स्वतः हो रहा है- बसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त और शिशिरादि समयानुसार इसको चला रहे हैं। सारा ब्रह्माण्ड एक यज्ञशाला है। कहीं जीवन यज्ञ है तो कहीं विनाश यज्ञ है। यस्यच्छाया अमृतं यस्यमृत्युः जीवन और मृत्यु दोनों प्रभु की कृपा है, इसी से संसार चल रहा है। कभी-कभी असुरों को नष्ट करना भी यज्ञ ही हो जाता है। इसे वेणीसंहार नाटक के कर्त्ता ने भीम के मुख से कहलाया है- कौन सा यज्ञ करोगे? द्रौपदी के इस प्रश्न के उत्तर में भीमसेन का प्रत्युत्तर औचित्य से पूर्ण है जो था रण यज्ञ करने का।

चत्वारो वयमृत्विजः स भगवान् धर्मोपदेष्टाहरिः। इसी प्रकार राम ने मारीच को मारने से पूर्व समझाया तथा पूछा था- हे स्वार्थी राक्षस तू आत्मम्भरि है। फलग्रही ऋषि जिसके पास कल का भोजन नहीं है उन पर दया न करके उनका तू मांस खाता है। मारीच ने इसका बहुत कठोर उत्तर देते हुए कहा कि हे राम! नगर उजाड़ना तथा ब्राह्मणों को मारना तथा ऋषियों को सताना हमारा स्वार्थ धर्म है। हम वेद धर्म को नहीं मानते हैं।

राम ने कहा सचमुच यदि तेरा धर्म ऋषियों को मारकर खाना ही है तो मेरा यज्ञ तुझे मारना ही है। मैं तुझ ब्रह्मद्रोही को अवश्य मारकर धर्म ही करूंगा। राम ने कहा-

धर्मोऽस्ति सत्यं तव राक्षसाम, मन्यो व्यतिस्ते तु ममापि धर्मः।
ब्रह्मद्विषस्ते प्रणि हन्मियेन, राजन्य वृत्तिर्धृत कामुकेषु।।

ब्राह्मणवृत्ति से अहिंसक यज्ञ अध्वर होते हैं। यह सब पंचमहायज्ञों के रूप में तथा सामयिक परिस्थितियों में १६ संस्कार जैसे यज्ञ होते हैं। अन्य यज्ञ लौकिक क्षेम कल्याण के लिए होते हैं। वे सब योगक्षेमो नः कल्पताम् के अन्तर्गत हैं।

राजनैतिक क्रान्तियां अन्याय के दमन के लिए सदा होती रहती हैं आज भी हो रहीं हैं। इस विशाल विश्वोद्यान का माली यथोचित कांट-छांट करता हुआ इस विश्व यज्ञ को चला रहा है। हम इसे नाटक समझ लें, यज्ञ समझ लें, या क्रीडक्षेत्र समझ कर जीवन को इस प्रकार व्यतीत करें जैसे खेल के मैदान में अपने चातुर्य कौशल से प्रदर्शन करता हुआ लक्ष्य को प्राप्त करता है उसी प्रकार हम अपने यज्ञ रूपी क्रियात्मक जीवन से मानवता के महान लक्ष्य को प्राप्त करें।

संस्कृत विश्व भाषा है, मृत भाषा नहीं

-डा. भवानीलाल भारतीय 3/5 शंकर कालोनी श्रीगंगानगर

तथाकथित भाषा वैज्ञानिकों ने एक भ्रमात्मक धारणा प्रचलित कर रखी है कि संस्कृत से भी प्राचीन एक अन्य भाषा प्रचलित थी जो लुप्त हो चुकी है। उनकी यह कल्पना सर्वथा निराधार है और उस कल्पित भाषा के अस्तित्व की सिद्धि करने में ये लोग सर्वथा असफल रहे हैं। तथापि वे दो अन्य आक्षेप अवश्य लगाते हैं-प्रथम, संस्कृत मृत भाषा हैं। विगत में चाहे उसका प्रचलन रहा हो। किन्तु आज उसका समान प्रयोग कहीं देखने में नहीं आता। दूसरा आक्षेप यह है कि यह भाषा ब्राह्मणों और पुरोहितों की भाषा है जिसका प्रयोग मात्र हिन्दुओं के धार्मिक कर्मकाण्ड में होता है, जहां बिना अर्थ समझे मंत्रों का झूठा सच्चा उच्चारण का अपठित यजमान से अच्छी खासी दक्षिणा वसूली जाती है।

उपर्युक्त दोनों आक्षेप सत्यता की कसौटी पर स्वयं नहीं उतारते- संस्कृत यदि मृत भाषा होती तो उसका पठन-पाठन भारत से भिन्न यूरोपीय तथा अमरीकी महाद्वीप के विश्व-विद्यालयों में आज प्रचलित नहीं होता, न भारत के हजारों गुरूकुलों महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में उच्च स्तरीय पठन-पाठन एवं शोधकार्य उस पर किया जाता।

संस्कृत को केवल पुरोहितों और भिक्षोपजीवी बाह्मणों की भाषा कहना भी सत्य से दूर भागना है। मैंने 1959 में चितौड़गढ़ गुरुकुल में आयोजित अखिल भारतीय संस्कृत महा सम्मेलन के अधिवेशन में देखा कि एक ओर जहां मिथिला, बंग, काशी तथा महाराष्ट्र के शिखा सूत्रधारी संस्कृत विद्वान् धाराप्रवाह अविरल संस्कृत में सम्भाषण कर रहे हैं वहां सूट बूट टाई लगाये विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक तथा छात्र संस्कृत माध्यम से वार्तालाप कर रहे हैं। जर्मनी में संस्कृत के विद्वानों की लम्बी परम्परा उन्नीसवीं शताब्दी से ही रही है। इसमें मैक्स-मूलर, वेबा, याकोबी सदृश विद्वानों ने अपना सारा जीवन संस्कृत पठन-पाठन तथा शोध में व्यतीत किया तो इंग्लैण्ड के सर विलियम जोन्स से लेरा मैकडानाल (आर्वर ए चनी) तथा कीथ तक के विद्वानों ने संस्कृत के प्रचार प्रसार में अपनी शक्तियां लगाईं। अमेरिका के हिटनी ने अथर्ववेद का सम्पादन किया तो फ्रान्स और रूस भी संस्कृत को बढ़ावा देने में पीछे नहीं रहे।

यह धारणा भी भ्रमाधारित है कि संस्कृत केवल ब्राह्मणों और पुरोहितों की भाषा है जिसके द्वारा वे अपठित हिन्दुओं का बौद्धिक शोषण करते रहे हैं। मैंने उक्त सम्मेलन में देखा कि जहां महामहोपाध्याय उपाधिधारी पं. गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी तथा महामहोपाध्याय पं. परमेश्वरानन्द शास्त्री जैसे सनातनी विद्वान् अस्खलित संस्कृत में विचार कर रहे हैं वहां दण्डी ब्रह्मानन्द, आचार्य विश्वश्रवा तथा आचार्य भगवान देव सदृश आर्य समाजी विद्वान भी अपनी शास्त्रार्थ पटुता का प्रदर्शन उतनी ही प्रगल्भता से कर रहे हैं। मैंने आश्चर्य पूर्वक देखा कि मुंह पर पट्टी बांधे जैन श्वेताम्बर सम्प्रदाय गुनिगण संस्कृत संभाषण में रत हैं तो श्रीलंका, नेपाल, तिब्बत तथा म्यामंर से आये लाल-पीले वस्त्रों तथा चीवर धारण किये बौद्ध भिक्षुओं की अभि-व्यक्ति का माध्यम भी संस्कृत है। क्या वैदिक और अवैदिक, क्या श्रमण और क्या ब्राह्मण, यहा तक कि संस्कृत के गौरांग विद्वानों को अटपटी संस्कृत बोलते सुन कर यह भ्रम मिट जाना चाहिए कि संस्कृत किसी वर्ग विशेष की धरोहर है।

संस्कृत के प्राचीन वाङ्मय को देखें। राम हनुमान का संवाद मधुर प्राञ्जल संस्कृत में होता है। भोज प्रबंध के उन प्रसंगों पर दृष्टिपात करें जहां राजा भोज को एक लकड़हारा लज्जित कर देता है जब उनके मुंह से शुद्ध 'बाधते' के स्थान पर अशुद्ध शब्द 'बाधति' का प्रयोग हुआ। जब राजा ने एक जुलाहे को संस्कृत में काव्य रचना करते सुना तो उसके आश्चर्य का पाठ नहीं रहा जब उसने अलंकारयुक्त श्लोक में कहा- (भावार्थ मात्र) मैं काव्य रचना करता हूँ यद्यपि बहुत उत्कृष्ट काव्य नहीं लिख पाता। मेरा व्यवसाय कपड़ा बुनना है। कवयामि, व्यामि, यामि जैसे आनुप्रांसिक प्रयोग उसने किये और राजा भोज को आश्चर्यन्वित किया। मृच्छकटिक नाटक का ब्राह्मण चार शर्विलक तो संस्कृत में लिखे चौर्यशास्त्र की बात करता है जब कि श्रृंगारहार में चोर, ठग, लुच्चे लफंगे भी संस्कृत में अपने अच्छे बुरे ख्याल प्रकट करते हैं।

पृष्ठ 2 का शेष-सर्वज्ञ, सर्वव्यापक.....

हमारे वैज्ञानिकों ने आज तक जितनी भी खोजें व आविष्कार किए हैं वह सब उन्होंने अपने शरीर या इन्द्रियों से नहीं किए हैं अपितु इनके सहयोग से वह सब उनकी अत्यन्त सूक्ष्म एवं अल्प प्रमाण आत्मा, सिर के बाल के अग्रभाग के एक बहुत छोटे टुकड़े के 1,000 वें भाग से भी सूक्ष्म आत्मा का परिमाण है, द्वारा निष्पादित व कृतकार्य होते हैं। आत्मा संकल्प मात्र से शरीर को चलाती है। शरीर, मन व बुद्धि सहित इसकी सभी इन्द्रियां स्वस्थ अवस्था में आत्मा के आदेशों का पूर्ण पालन व अनुगमन करती हैं। संकल्प व विचार करने मात्र से हाथ उठ जाता है, व्यक्ति चलता फिरता व भ्रमण करता है, बुद्धि चिन्तन में लग जाती है, हाथों को जैसा आदेश दें वही कार्य करते हैं, पुस्तक पढ़ने की इच्छा करने पर वह पुस्तक को पकड़ कर आंखों के पास रखते हैं, भोजन करते समय हाथ से भोजन को उठा कर मुंह में डालते हैं, दांत अपना कार्य करते हैं, इसी प्रकार सब इन्द्रियां, अंग-प्रत्यंग व अवयव अपना-अपना काम करते हैं। परन्तु ध्यान देने योग्य मुख्य बात यह है कि यह शरीर के अंग स्वयं अपने आप कुछ नहीं करते, आत्मा की आज्ञा मिलने पर ही करते हैं। इससे यह सिद्ध है कि आत्मा शरीर को चलाती व इच्छानुसार काम लेती है। ईश्वर सबसे बड़ा, वृहत परिमाण, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, सर्वज्ञ, निराकार, सृष्टि निर्माण कार्य का अनुभव रखने वाला है। वह निराकार होकर भी इस सृष्टि से इस ब्रह्माण्ड को बनाने की क्षमता रखता है जैसे कि आत्मा शरीर की सहायता से इच्छानुसार नाना प्रकार के कार्य करती है। अत: किसी को भी निराकार, सगुण व निर्गुण ईश्वर से इस समस्त सृष्टि व ब्रह्माण्ड की रचना में सन्देह व शंका नहीं करनी चाहिये। इसके लिए सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका, गीता, मनुस्मृति, उपनिषद, दर्शन व वेद आदि ग्रन्थों को पढ़ना चाहिये जिससे सभी शंकाओं का निवारण सरलता से हो चुके।

हमारा इस लेख को लिखने का प्रयोजन यह प्रकट करना है कि मनुष्य जो-जो कार्य करता है वह उसका एकमात्र शरीर स्वयं स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं करता अपितु इसमें मुख्य रूप से निराकार जीवात्मा की प्रेरणा, शक्ति, निर्देश, संकल्प व विचार होते हैं। सभी वैज्ञानिक खोजों का आधार वैज्ञानिकों की जीवात्मायें ही रही हैं जिन्हें ईश्वर ने मनुष्य जन्म दिया। उन जीवात्माओं में उनके पूर्व जन्मों के संस्कारों की उपस्थिति व इस जन्म के पुरूषार्थ के अनुसार उन्हें ईश्वर की प्रेरणायें उसके आत्मस्थ व जीवस्थ स्वरूप से प्राप्त हुईं जिससे वह इच्छित विषयों का ज्ञान प्राप्त कर वैज्ञानिक खोजें व आविष्कार कर सके जिसका चिन्तन उन्होंने किया था। यद्यपि इसमें वैज्ञानिकों के जड़ व पार्थिव शरीरों का भी कुछ योगदान है, परन्तु सर्वाधिक श्रेय निराकार चेतन तत्व जीवात्मा व ईश्वर की प्रेरणा को है। हम आशा करते हैं कि पाठक इस विषय में स्वयं चिन्तन कर ईश्वर व जीवात्मा के स्वरूप सहित ब्रह्माण्ड की रचना को भी समझने में यत्किंचित सक्षम व सफल होगें। हम आशा करते हैं कि आने वाले समय में, देर या सवेर, वैज्ञानिक भी वेद, उपनिषद, दर्शन, मनुस्मृति, सत्यार्थ प्रकाश व ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका आदि सत्य ग्रन्थों का अध्ययन कर इस परिणाम पर पहुंचेंगे कि ईश्वर व जीवात्मा का स्वतन्त्र अस्तित्व है तथा यह संसार ईश्वर ने जीवात्माओं के लिए बनाकर उनके पूर्व जन्म-जन्मान्तर के पुण्य-पाप कर्मों के फलों के भोग व अपवर्ग अर्थात् मुक्ति के लिए उन्हें प्रदान किया है। यह दृश्यमान संसार या भौतिक जगत उस निराकार चेतन ईश्वर की साकार रचना व कार्य है।

www.thearyasamaj.org

लोक हित के कर्मों से उन्नति सम्भव

-डा. अशोक आर्य १०४ शिप्रा अपार्टमेन्ट, कौशाम्बी

संसार में हमारी जितनी भी क्रियाएं हैं, उन सब में हमारा दृष्टि कोण "प्राण शक्ति की रक्षा, तीनों प्रकार के तापों से निवृति तथा लोक हित होना चाहिये। यदि हम ऐसा कर पाये तो निश्चय ही हमारे घर उच्चकोटि के निवास के योग्य, मंगल से भरपूर, सुखकारी, लोगों के विश्राम के योग्य, सब प्रकार के बलों व प्राणशक्ति से सम्पन्न तथा सब प्रकार की वृद्धि, उन्नति का कारण बनेंगे।" यजुर्वेद का यह प्रथम अध्याय का २७ वां मन्त्र इस पर ही प्रकाश डालते हुए कह रहा है कि-

गायत्रेण त्वा छन्दसा परिगृह्णामि त्रैष्टुभेन त्वा छन्दसा
परिगृह्णामि जागतेन त्वा छन्दसा परिगृह्णामि।
सूक्षमा चासि शिवा चासि स्योना चासि सष्द
चास्यूर्जस्वती पयस्वती च॥ यजु. १.२७॥

मानव के लिए उसकी तीन क्रियाओं का विशेष महत्व होता है। इनमें एक प्राण शक्ति की रक्षा करना, दूसरे त्रिविध अर्थात तीनों प्रकार के तापों से निवृति तथा जनकल्याण या लोकहित के कार्य करना। जब इस प्रकार के कार्य होंगे तो हमारे घर, जिन्हें निवास भी कहते हैं, यह उत्तम प्रकार के निवास के योग्य होंगे, सुखकारक होंगे, लोगों के विश्राम के योग्य होंगे, यह बल तथा प्राण शक्ति से सम्पन्न होंगे। इस प्रकार यह सब प्रकार की वृद्धि, उन्नति का कारण होंगे।

आओ अब हम इस मन्त्र के विस्तृत भाव को समझने का प्रयास करें।

इस मन्त्र में प्रथम प्रश्न किया गया है कि हम इस संसार में आये हैं। हमारे लिए इस संसार में परम पिता परमात्मा ने अनेक वस्तुएं भी बना रखी हैं। यह हमारे ऊपर है कि हम इन वस्तुओं को किस रूप में अथवा किस प्रकार स्वीकार करें ? या यूं कहें कि हम इन वस्तुओं को किस दृष्टि कोण से लें अथवा प्रयोग करें ? इस विषय का उत्तर देते हुए प्रभु ने चार बिन्दुओं को सामने रखा है-

१. हम प्राणशक्ति के लिए ग्रहण करें-

मन्त्र उपदेश करते हुए कह रहा है कि मानव जब इन पदार्थों की आवश्यकता अनुभव करता है तो यह विचार कर इन्हें प्राप्त करता है कि वह जो भी वस्तु ईश की दी हुई प्राप्त कर रहा है, वह केवल प्राणों की रक्षा के लिए प्राप्त कर रहा है। मानव के लिए प्राण ही इस शरीर में सब से महत्त्वपूर्ण होते हैं। जब तक इस शरीर में प्राण गति कर रहे हैं, तब तक ही शरीर गति करता है। ज्यों ही इस से प्राण निकल जाते हैं, त्यों ही शरीर उपयोग के लिए नहीं रहता। तब तो परिजन भी इस शरीर से मोह नहीं करते तथा अब वह इसे शीघ्र ही परिवार से दूर एकान्त में जा कर सब के सामने इस का अन्तिम संस्कार कर देते हैं, दूसरे शब्दों में इसे अग्नि की भेंट कर देते हैं।

इस लिए मन्त्र में कहा गया है कि हम इस पदार्थ को प्राणशक्ति की रक्षा के लिए प्रयोग कर रहे हैं, ग्रहण कर रहे हैं। अत: हम इस वस्तु को अपने प्राणों की रक्षा की भावना से, रक्षा की इच्छा से प्राप्त कर रहे हैं। इसके लिए कुछ अन्य धारणाएं इस प्रकार दी हैं :-

क) खुला व हवादार घर बनावें-

मानव को अन्य पशु व पक्षियों की भान्ति नहीं रहना होता। इसलिए कहा जाता है कि प्रत्येक मानव के लिए सिर छुपाने के लिए छत की आवश्यकता होती है। अपने साधनों को ध्यान में रखते हुए घर का निर्माण किया जाता है, इस कारण किसी का घर बड़ा होता है और किसी का छोटा। यह मन्त्र हमारे निवास के लिए बनाए जाने वाले घर के लिए उपदेश कर रहा है कि हमारा घर ऐसा हो, जिसमें हमारे प्राण शक्ति की बड़ी सरलता से वृद्धि हो सके। सूर्य सब रोगों का विनाश करने वाला होता है, इसलिए घर ऐसा हो कि जिसमें सूर्य की किरणें सरलता से प्रवेश कर सकें। इस के साथ ही साथ इस घर की छत ऊंची हो, खूब खिड़कियां व खुले दरवाजे बनाये जावें ताकि खुली वायु का प्रवेश इस घर में सरलता से हो सके। यह वायु और सूर्य का प्रकाश व किरणें यदि घर में सरलता से प्रवेश करेंगे तो हमारे प्राणशक्ति बढ़ने से हमारी आयु भी लम्बी होगी।

ख) पोषक भोजन-

प्रत्येक प्राणी के लिए श्रद्धा शान्ति के लिए भोजन की आवश्यकता होती है। भोजन तो कोई भी किया जा सकता है। किन्तु यदि भोजन की व्यवस्था सोच समझ कर न की जावेगी तो यह रोग का कारण भी बन सकता है तथा प्राण शक्ति के नाश का भी, जब कि भोजन प्राण शक्ति की रक्षा के लिए किया जाता है। इसलिए हम सदा खाद्य पदार्थ लाते समय यह ध्यान रखें कि हम अपने घर वह ही खाद्य सामग्री लावें, जिसमें पौष्टिकता की प्रचुर मात्रा हो, ताकि प्राणशक्ति की वृद्धि हो सके।

ग) प्राणशक्ति बढ़ाने वाले कार्य करें-

मनुष्य कुछ न कुछ कार्य करता ही रहता है, वह खाली, निठल्ला बैठ ही नहीं सकता। यदि वह निठल्ला बैठता है तो वह बेकार हो जाता है, शारीरिक श्रम करने की शक्ति क्षीण हो जाती है तथा प्राणशक्ति कम हो कर उसकी आयु भी कम हो जाती है। जो मनुष्य श्रम करते हैं, कोई न कोई काम करते हैं, उनके लिए मन्त्र आदेश देता है कि वह सदा ऐसा कार्य करें, ऐसा श्रम करें, ऐसी सिद्धियां पाने का यत्न करें, जो प्राण शक्ति को बढ़ाने वाली हों।

घ) सत्संग में रहें-

मानव का रहन सहन दो प्रकार का होता है। एक सत्संग के साथ तथा दूसरा बिना सत्संग अर्थात कुसंग के साथ। कुसंग नाश का कारण होता है तो सत्संग निर्माण का कारण होता है। कुसंग में रहने वाला व्यक्ति बुरे कार्य करता है, मद्य, मांस व नशा आदि का सेवन करता है। इन वस्तुओं के सेवन से उसकी प्राणशक्ति का नाश होता है तथा वह जल्दी ही भयानक रोगों का शिकार होकर मृत्यु को छोटी आयु में ही प्राप्त हो जाता है।

इस सब के उलट जब वह सत्संग में रहता है, उत्तम आचरण में रहता है तो कुसंग में व्यर्थ होने वाला धन बच जाता है। यह धन प्रयोग करके वह अति पौष्टिक पदार्थ अपने परिवार व स्वयं के लिए लेने में सक्षम हो जावेगा, जिससे उसके प्राणशक्ति विस्तृत होंगे। इस के अतिरिक्त उसके पास दान देने की शक्ति भी बढ़ जावेगी। इस धन से दूसरों को भी ऊपर उठाने में भी सहायक हो सकता है। इससे उसकी ख्याति भी बढ़ती है, जो खुशी लाने का कारण बनती है। इस खुशी से भी प्राण शक्ति बढ़ जाती है। जब सत्संग में रहते हुए सत्य पर आचरण करेंगे तो उसकी मनोवृत्तियां भी उत्तम बन जावेंगी। यह वृतियां भी उसकी प्राणशक्ति बढ़ाने के कारण बनेगी।

२. त्रिविध दु:खों की निवृति के लिए ग्रहण कर-

मानव सब प्रकार के दु:खों से दूर तथा सुखों के साथ रहने की सदा अभिलाषा करता है। इस के लिए उसे कई प्रकार के यत्न करने होते हैं। इसलिए मन्त्र कह रहा है कि हमारे उपभोग में आने वाले सब पदार्थ हम सब लोगों को प्राण शक्ति को सम्पन्न करने वाले हों। इन के प्रयोग से सब लोगों की प्राण शक्ति सम्पन्न हो। इस लिए ही हम पदार्थों को ग्रहण करें। हम इस इच्छा से, इस भावना से इन पदार्थों को, इन वस्तुओं को ग्रहण करें कि जिनके सेवन से हम त्रिविध तपों को प्राप्त कर सकें। यही त्रिविध तप हैं, आध्यात्मिक, आधिदैविक तथा आधिभौतिक तप। इन त्रिविध तपों से हमारे सब प्रकार के दु:खों का नाश होता है।

दूसरे शब्दों में हम यूं कह सकते हैं कि हम इस इच्छा से, इस भावना से तुझे ग्रहण करते हैं ताकि मेरे घर परिवार में तीनों अर्थात प्रकृति, जीव और परमात्मा का स्तवन हो, यह तीनों ही प्राणशक्ति का आधार हैं। इस लिए इन तीनों का ठीक से विचार करना आवश्यक हो जाता है।

३. जन हित के लिए पदार्थों का सेवन करें-

मानव का कल्याण तब ही होता है, मानव का हित तब ही होता है, जब इस जगती का हित हो।

(शेष पृष्ठ 7 पर)

श्री कृष्ण लाल जी का देहावसान

आर्य प्रतिनिधि पंजाब के अन्तरंग सदस्य श्री कमल किशोर जी के बड़े भाई श्री कृष्ण लाल जी का 3 अक्तूबर 2013 को निधन हो गया। श्री कृष्ण लाल जी धार्मिक प्रवृत्ति के इन्सान थे। उनकी आत्मिक शांति के लिए अन्तिम शोक सभा 12 अक्तूबर को सम्पन्न हुई। कई गणमान्य लोगों ने अपनी हार्दिक श्रद्धांजलि भेंट की और दिवंगत आत्मा की सद्गति एवं शान्ति के लिए प्रार्थना की।

आर्य मर्यादा के पाठकों के सूचनार्थ

आर्य मर्यादा का आगामी अंक दिनांक 23 अक्तूबर और 30 अक्तूबर 2013 का दीपावली विशेषांक होगा। इसलिये सभी आर्य मर्यादा के ग्राहक अवगत हों। **-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा**

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/-रुपये है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/-रुपये है। इसलिये मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा। **-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा**

विजयदशमी पर्व का आयोजन

आर्य समाज मंदिर शहीद भगत सिंह नगर जालन्धर में विजयदशमी पर्व का आयोजन 13 अक्तूबर रविवार को श्रद्धापूर्वक किया गया। उप प्रधान श्री राजिन्द्र देव विज ने यज्ञमान के रूप में बैठे चौधरी हरिचन्द्र, राजन तिवारी, विभा विज, नंदिता विज व आर्य माडल स्कूल के छात्र छात्राओं से वैदिक मंत्रोच्चारण के साथ पवित्र हवनकुंड में आहुतियां डलवाई। साप्ताहिक यज्ञ के साथ साथ विजयदशमी के सुअवसर पर विशेष आहुतियां डलवाई गई। सभी ने श्रद्धापूर्वक एवं निष्ठा के साथ हवन यज्ञ किया। यज्ञ प्रार्थना के पश्चात श्रीमती अर्चना मिश्रा जी ने भजन सुना कर सब को भाव विभोर कर दिया। प्रधान श्री ओम प्रकाश जी अग्रवाल ने विजयदशमी के अवसर पर इसके बारे में विस्तारपूर्वक सरलता से सबको बताते हुये कहा कि अपने अंदर का अहंकार रूपी रावण मारने की जरूरत है। श्री राजिन्द्र देव विज ने विजयदशमी के बारे में बताते हुये कहा कि यह त्यौहार बुराई पर अच्छाई की जीत का प्रतीक है। अत: बुराई के आगे घुटने टेकने की बजाए उस पर विजय पाने की जरूरत है। प्रधान श्री ओम प्रकाश जी अग्रवाल ने आर्य माडल स्कूल के बच्चों को कापियां एवं पैन वितरित किये। **-ओम प्रकाश अग्रवाल प्रधान**

पृष्ठ 6 का शेष-लोक हितं.....

इसलिए हमें वह ही कार्य करना चाहिये तथा वह ही पदार्थ प्रयोग करने चाहियें, जिनसे जगती का हित हो। अत: हम जो भी पदार्थ ग्रहण करें, वह जगती के हितकामना से, हित की इच्छा से ही ग्रहण करें। हमारे अन्दर सदा लौकिक व जनहित की भावना का होना आवश्यक है। अत: हम जो भी पदार्थ ग्रहण करें। उसे लोक हित के लिए समर्थ होने के लिए ही पाना होगा। स्वयं को लोकहित के लिए अधिक समर्थ होने का हम सदा यत्न करें।

भोजन भी हम स्वस्थ रहने के लिए करते हैं। इसलिए हम सदा इस प्रकार का भोजन करें, जो सुपाच्य हो, पौष्टिक हो तथा जो भोजन हमें स्वस्थ भी रखे। हम सदा ऐसा भोजन करें कि जिससे हम दीर्घ जीवी बन सकें तथा सदा लोक संग्रहक, लोक कल्याण के कार्यों में लगे रहें।

४. गायत्री, त्रैष्टुप व जागत श्रेणी का घर बनावें :-

जब हमारा दृष्टिकोण इस मन्त्र के उपदेशों के अनुरूप बन जावेगा तो यह ''गायत्र, त्रैष्टुभ व जागत'' की श्रेणी में ही होगा। हमारा घर सब प्रकार की प्राणशक्ति को प्राप्त करने वाला होकर हम अपने घर के बारे में इस प्रकार कह सकेंगे कि-

क) हे भवन ! तू उत्तम निवास के योग्य बन गया है। ख) हे भवन ! तू कल्याण रूप भी है। ग) हे भवन ! तू यह सब सुख देने वाला भी है। घ) इतना ही नहीं हे भवन ! तू सब लोगों की उतमता के लिए ठीक से बैठने के लिए भी अच्छा व उत्तम है। ङ) इस प्रकार हे भवन ! तू प्राण शक्ति से सम्पन्न है और हमें भी उत्तम प्राण शक्ति देने वाला है। च) हे भवन ! तेरे अन्दर खुली हवा, खुली सूर्य की किरणें आ सकती हैं। इस कारण तेरे में प्राणशक्ति को बंटाने की खूब क्षमता होने से, इस के सब निवासियों को उन्नति करने वाला है।

इस प्रकार इस मन्त्र में प्राण शक्ति को बंटाने के लिए उन्नत करने के लिए सुपाच्य भोजन व सत्संग के साथ ही साथ उतम भवन जिसमें खुली वायु व सूर्य की किरणें आती हों तथा जो प्राणशक्ति को बंटा कर उन्नत करने वाले हो तथा त्रिविध सुखों को देने वाला हो, ऐसा होना चाहिये।

आर्य समाज जवाहर नगर लुधियाना का वार्षिक उत्सव सम्पन्न

आर्य समाज जवाहर नगर लुधियाना का वार्षिक उत्सव 3 से 6 अक्तूबर 2013 तक बड़ी श्रद्धा एवं उत्साह के साथ मनाया गया। सुन्दर व सुसज्जित सत्संग भवन में उत्सव का शुभारम्भ 3 अक्तूबर वीरवार को प्रात: मंगल यज्ञ से हुआ जिसके ब्रह्मा आर्य समाज के पुरोहित आचार्य बाल कृष्ण जी शास्त्री थे। उत्सव का कार्यक्रम प्रतिदिन प्रात: एवं रात्रि को चला। आर्य जगत के प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् आचार्य राजू जी वैज्ञानिक के उत्तम प्रवचन हुए। प्रात: कालीन सत्रों में प्रवचन करते हुए उन्होंने बतलाया कि प्राणी मात्र की इच्छा दु:खों से छूट कर पूर्ण आनन्द को प्राप्त करना है, जिसके लिए हमें परमात्मा को जानना और प्राप्त करना है। परमात्मा को प्राप्त करने के लिए उसकी भक्ति अर्थात् उसकी आज्ञाओं का पालन करना अति आवश्यक है। उसकी आज्ञाएं उसके काव्य अर्थात् वेद श्रुति का अध्ययन कर तथा उसके हृदय काव्य यानि उसके बनाए संसार के पदार्थों को देखकर ही समझ आ सकती है। वेद के बताए निर्देशों का पालन कर ही इस संसार में सुख प्राप्त करते हुए हम आनन्द मोक्ष को प्राप्त कर सकते हैं। रात्रि कालीन सत्रों में ऋग्वेद के मंत्र ''स्वस्ति पन्थामनुचरेम.....'' के भावार्थ को समझाते हुए बतलाया कि हमें सूर्य व चन्द्रमा के समान कल्याणकारी मार्ग पर चलना चाहिए जिस प्रकार सूर्य अपने आपको प्रकाशित कर जगत को प्रकाशित करता है और चन्द्रमा सौम्य बिखेरता है उसी प्रकार मनुष्य को भी अपने जीवन को सद् ज्ञान से प्रकाशित कर तथा अपने में सौम्यता लाते हुए औरों का उपकार करते रहना चाहिए। सदा दानशील, वैर-रहित व्यक्तियों एवं विद्वान पुरुषों की सत्संगति करनी चाहिए ताकि उनके गुण हममें भी आ सकें।

अमृतसर से पधारे श्री दिनेश जी पथिक एवं श्री जय करण, अनिल गौतम, श्रीमती अनु गुप्ता, बोबी शर्मा, कुमारी रमनदीप, वीना गुलाटी, श्री अनिल कुमार, विजय सरीन, हरबंस लाल जी सहगल ने प्रात: एवं रात्रि के सत्रों में मधुर भजन सुनाए। उत्सव का समापन समारोह रविवार 6 अक्तूबर को हुआ। प्रात: 8.30 बजे यज्ञ आरम्भ हुआ जिसकी ज्योति श्रीमती एवं श्री राकेश जैन जी व रजनीश सरीन जी ने प्रज्वलित की। चार यज्ञ-कुण्डों पर बैठकर यजमानों ने बड़ी श्रद्धापूर्वक यज्ञ किया। यज्ञ की सुगन्धि एवं वेद मन्त्रों की गूंज से चारों ओर आनन्द बरस रहा था। सुन्दर व शान्त वातावरण में यज्ञ की पूर्ण आहुति हुई जिसमें चारों दिनों के यजमानों ने बड़ी श्रद्धा से आहुतियां चढ़ाई। सभी यजमानों को विद्वानों द्वारा आशीर्वाद दिया गया एवं स्वाध्याय के लिए धार्मिक पुस्तकें भेंट की गईं। यज्ञ के पश्चात् ध्वजारोहण किया गया। श्री दिनेश जी ने ध्वज गीत गाया तथा आर. एस. माडल स्कूल लुधियाना के छात्रों ने सुन्दर बैंड बजाकर सभी को आकर्षित किया। ध्वजारोहण के पश्चात् मुख्य अतिथियों को स्मृति चिन्ह भेंट किए गए। मंच का संचालन करते हुए आर्य समाज के महामंत्री श्री अनिल कुमार जी ने सभी विद्वानों का अभिनन्दन किया तथा श्री दिनेश पथिक जी से भजनों के कार्यक्रम को प्रस्तुत करने के लिए आमन्त्रित किया। उन्होंने अपने भजनों की लड़ी को प्रभु भक्ति के भजन ''काहे को तूने प्रभु नाम न गाया, सुन मन मेरे, सांझ सवेरे, वक्त बड़ा अनमोल गंवाया'' से आरम्भ होकर महर्षि दयानन्द पर तथा सत्संग की महिमा पर अपने मधुर स्वर में मनोहर भजन सुनाकर श्रोताओं को मंत्रमुग्ध किया। सामूहिक भजन ''सत्संग वाली नगरी चल रे मना, पी सद् ज्ञान का जल रे मना'' सुना कर भजनों के कार्यक्रम को सम्पन्न किया। इस उत्सव में देवकी देवी जैन मैमोरियल कालेज, लुधियाना की सात छात्राओं को बी. ए. फाईनल की परीक्षा में संस्कृत विषय में अपने महा-विद्यालय से प्रथम पांच स्थान प्राप्त करने पर श्रीमती सुमित्रा देवी जी बस्सी द्वारा आरक्षित राशि से पारितोषिक एवं स्मृति चिन्ह देकर सम्मानित किया गया।

श्रद्धेय आचार्य राजू जी वैज्ञानिक ने उत्सव का संदेश देते हुए कहा कि सांसारिक संबंध सदा नहीं रहते, इसलिए मनुष्य को परमात्मा से सम्बन्ध जोड़ना चाहिए जो सम्बन्ध पवित्र एवं नित्य है। धन जोड़ने के स्थान पर मनुष्य अपने अन्तकरण को सत्य, ज्ञान, धर्म, दया, शान्ति एवं क्षमा से भरकर अपने जीवन को सफल करना चाहिए।

आर्य समाज जवाहर नगर के प्रधान डा० विजय सरीन जी ने सर्वप्रथम परम पिता परमात्मा का धन्यवाद करने के पश्चात् सभी विद्वानों, संगीतज्ञों तथा उपस्थित आर्य जनता का धन्यवाद किया। लुधियाना ज़िला की सभी आर्य समाजों, स्त्री आर्य समाजों, ज़िला आर्य सभा तथा आर्य शिक्षण संस्थाओं के अधिकारियों व सदस्यों ने सम्मिलित होकर लाभ उठाया तथा उत्सव की शोभा को बढ़ाया। प्रभु कृपा से उत्सव पूर्ण रूपेण सफल रहा। कार्यक्रम के उपरान्त 12:30 बजे सभी ने प्रेमपूर्वक ऋषि लंगर ग्रहण किया। आर्य समाज के उप प्रधान श्री राजेन्द्र जी बेरी, बृजमोहन जी अरोड़ा, महामंत्री श्री अनिल कुमार, कोषाध्यक्ष श्री राजीव गुप्ता, मंत्री श्री ब्रजेश पुरी, श्री हरबंस लाल सहगल, ओम प्रकाश गुप्ता, अजय मोगा, संजीव गुप्ता, श्रीमती वीना गुलाटी (पुस्तकाध्यक्ष), मीरा सरीन, अनु गुप्ता एवं श्वेता सेतिया का विशेष सहयोग रहा। आर्य समाज के सभी सदस्यों एवं बच्चों ने बड़ी लगन के साथ कार्य किया। सभी का हृदय से धन्यवाद। **-प्रधान**

www.thearyasamaj.org

रजि. नं. पी.बी./जे.एल–/0011/2012-14 RNI No. 26281/74

श्री गुरु विरजानन्द गुरुकुल करतारपुर का वार्षिकोत्सव

गुरु विरजानन्द स्मारक समिति ट्रस्ट करतारपुर का 47वां एवं श्री गुरु विरजानन्द गुरुकुल महाविद्यालय करतारपुर का 43वां वार्षिक महोत्सव 14 अक्तूबर 2013 सोमवार से 20 अक्तूबर 2013 रविवार तक अत्यन्त उत्साहपूर्वक मनाया जा रहा है। इसमें 14 अक्तूबर से 20 अक्तूबर तक प्रात: 7.30 बजे से सामवेद पारायण यज्ञ होगा। यज्ञ के ब्रह्मा प्रख्यात वैदिक विद्वान वेद प्रकाश जी श्रोत्रिय होंगे। गुरुकुल के कुलपति डा. स्वामी दिव्यानंद सरस्वती जी अध्यक्ष रहेंगे। वेदपाठ हमारे गुरुकुल के ब्रह्मचारी करेंगे तथा भजन संगीत भी हमारे गुरुकुल के ब्रह्मचारी करेंगे।

18 अक्तूबर 2013 शुक्रवार को दोपहर 2 बजे से 6 बजे तक अन्तर्गुरूकुलीय श्लोकोच्चारण, मन्त्रोच्चारण तथा हिन्दी भाषण प्रतियोगिताएं होंगी। मंच संचालन गुरुकुल के प्राचार्य डा. भूषण लाल शर्मा करेंगे। 19 अक्तूबर शनिवार को यज्ञ के पश्चात ध्वजारोहण होगा। ध्वजगीत गुरुकुल के ब्रह्मचारी गाएंगे। फिर प्रात: 10 बजे से 1 बजे तक श्री गुरु विरजानन्द सम्मेलन होगा जिसमें मुख्य वक्तव्य विषय भारतीय संस्कृति के समुत्थान में गुरुकुलों की भूमिका रहेगा। इस कार्यक्रम के संयोजक श्री प्रिंसीपल अश्विनी कुमार शर्मा महामंत्री रहेंगे। अध्यक्ष डा. स्वामी दिव्यानंद सरस्वती तथा विशेष अतिथि श्री वेद प्रकाश जी श्रोत्रिय होंगे।

उसी दिन बाद दोपहर 2 बजे से 5 बजे तक महिला सम्मेलन होगा जिसकी संयोजिका श्रीमती सुशीला जी भगत होंगी। इसमें श्रीमती सुषमा चोपड़ा जी पटेल अस्पताल जालन्धर अध्यक्षा रहेगी तथा मुख्य अतिथि के रूप में श्रीमती आतिमा शर्मा प्रधानाचार्य कन्या महाविद्यालय जालन्धर रहेगी। अतिथि के रूप में श्रीमती कुमुद पसरीचा, शिवम अस्पताल जालन्धर रहेगी। श्रीमती प्रोमिला अरोड़ा विशेष अतिथि होगी। मुख्य वक्त्री श्रीमती जनक रानी आर्य, श्रीमती नीलम थापर, श्रीमती राजेश शर्मा तथा श्रीमती इंदिरा शर्मा लुधियाना होगी। इस सम्मेलन में श्रीमती रश्मि घई मधुर भजन प्रस्तुत करेंगी। कार्यक्रम आर्य कन्या हाई स्कूल करतारपुर की छात्राएं तथा आर्य माडल स्कूल करतारपुर के छात्र कार्यक्रम प्रस्तुत करेंगे।

इसी दिन 7.30 बजे से 9.30 बजे तक भजन संध्या का कार्यक्रम रहेगा। कार्यक्रम की संयोजिका श्रीमती रश्मि घई जी रहेगी। इसमें मुख्य अतिथि श्री कुन्दन लाल अग्रवाल जालन्धर रहेगे। इसमें श्री दिनेश कुमार जी, श्री वीरेन्द्र कुलदीप साथी, श्रीमती सोनू भारती, श्री राजेश अमर प्रेमी, श्रीमती सीमा जी अनमोल, श्रीमती सरला सेतिया, श्रीमती रजनी सेठी, मान्या बहन कृष्णा कुमार और गुरुकुल के श्री यतेन्द्र शर्मा जी तथा ब्रह्मचारियों के भजन होंगे।

20 अक्तूबर 2013 को प्रात: 7.30 बजे से 9.00 बजे तक यज्ञ होगा। सामवेद पारायण यज्ञ की पुर्णाहुति के पश्चात आशीर्वाद प्रवचन तथा यज्ञ ब्रह्मा द्वारा आशीर्वाद के बाद 9.45 से 12.45 तक राष्ट्रीय चरित्र निर्माण सम्मेलन होगा। जिसके संयोजक प्रिंसीपल अश्विनी कुमार शर्मा महामंत्री गुरुकुल होंगे। गुरुकुल के प्राचार्य गुरुकुल की वार्षिक उपलब्धियों पर प्रकाश डालेंगे और ब्रह्मचारियों का कार्यक्रम होगा। शांति पाठ के पश्चात ऋषि लंगर की व्यवस्था होगी। इस साप्ताहिक वार्षिक उत्सव में सभी बढ़ चढ़ कर भाग लेंगे।

अर्जुनदेव चड्ढा का नागरिक अभिनन्दन 'आर्यसेवाश्री' उपाधि से अलंकृत

आर्य समाज रावतभाटा के 47वें वार्षिकोत्सव के अवसर पर आज 13 अक्तूबर 2013 को आर्य समाज रावतभाटा तथा विभिन्न संस्थाओं के संयुक्त तत्वाधान में जिला आर्य सभा कोटा के प्रधान श्री अर्जुन देव चड्ढा को 'आर्य सेवाश्री सम्मान' से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर श्री चड्ढा का रेशम पाल सिंह प्रधान आर्य समाज रावतभाटा ने मोतियों की माला पहनाकर स्वागत किया। पूर्व मंत्री योगेश आर्य ने शाल ओढ़ाई तथा नरदेव आर्य ने स्मृति चिन्ह तथा प्रशस्तिपत्र प्रदान किया। इस अवसर पर आर्य विद्वान ओमप्रकाश आर्य ने सम्मान पत्र सबके समक्ष पढ़कर सुनाया। सम्मान समारोह के इस अवसर पर अर्जुनदेव चड्ढा ने कहा कि जब तक में किसी गरीब की सेवा न कर लूं तब तक मुझे संतोष नही मिलता है। हम जेलों में बन्दियों के लिए कम्बल तथा शॉलें उपलब्ध करवाते है। स्कूल में पाठ्य सामग्री तथा ड्रेस उपलब्ध करवाते है।

उन्होंने महिलाओं से निवेदन किया कि घरों में अपने सास-ससुर की सेवा कर स्वाध्याय करें। नागरिक सम्मान समारोह के इस अवसर पर आर्य समाज के वैदिक विद्वान विष्णु मित्र शास्त्री, भजनोपदेशक संजीव आर्य वैदिक विद्वान् अग्निमित्रशास्त्री आर्य विद्वान राम प्रसाद याज्ञिक, आर्य लेखक ओमप्रकाश आर्य, नरदेव आर्य तथा अनेक संस्थाओं के प्रतिनिधि उपस्थित थे।

–नरदेव आर्य

गुरूकुल का आयुर्वेद महान
घर-घर में मिले रोगों से निदान

100 गुरुकुल शताब्दी

गुरुकुल च्यवनप्राश
सभी के लिए स्वादिष्ट, रुचिकर, पौष्टिक रसायन।

गुरुकुल पायोकिल
पायोरिया की आयुर्वेदिक औषधि दांतों में खून रोके, मुंह की दुर्गन्ध दूर करे, मसूड़ों के रोग, ढीले दांत ठीक करे।

गुरुकुल शतशिलाजीत सूर्यतापी
पुष्टीदायक, बलवर्धक
शरीर में नया खून और उत्साह का अनुभव

गुरुकुल ब्राह्मी रसायन
बुद्धिवर्धक, स्फूर्तिदायक, दिमागी कमजोरी दूर करे।

गुरुकुल मधुमेह नाशिनी गुटिका
मधुमेह एवं प्रत्येक प्रकार के प्रमेह में लाभदायक

गुरुकुल मधु
गुणवत्ता एवं ताज़गी के लिए

गुरुकुल चाय
खाँसी, जुकाम, इन्फ्लूएंजा व थकान में अत्यंत उपयोगी।

अन्य प्रमुख उत्पाद
गुरुकुल द्राक्षारिष्ठ
गुरुकुल रक्तशोधक
गुरुकुल अश्वगंधारिष्ट

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार डाकघर : गुरुकुल कांगड़ी-249404, ज़िला-हरिद्वार (उत्तरांचल) फोन : 0134-416073

शाखा कार्यालय : 63, गली राजा केदार नाथ, चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-6, फोन : 23261871

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा आर. के. प्रिटर्स प्रैस, टाण्डा फाटक जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। E-mail: apspunjab2010@gmail.com
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।